Postal Regn. - RTK/010/2020-22
RNI - HRHIN/2003/10425

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र

सितम्बर 2022 (प्रथम)

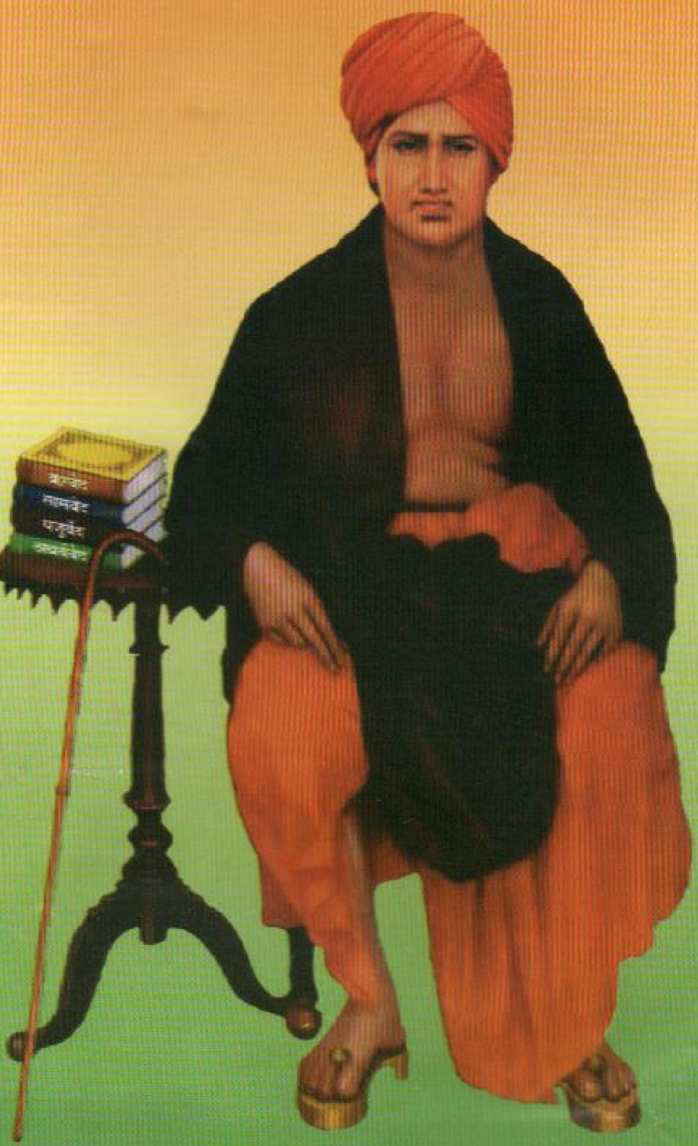

Email : aryapsharyana@yahoo.in

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

Visit us : www.apsharyana.org

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,123
विक्रम संवत् 2079
दयानन्दाब्द 199

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा

की

मुख-पत्रिका

वर्ष 18 अंक 15

सम्पादक :

उमेद सिंह शर्मा

पत्रिका-शुल्क

देश में

वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये

विदेश में

वार्षिक शुल्क 100 डॉलर

आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)

सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,

गोहाना रोड, रोहतक-124001

सह-सम्पादक

आचार्य सोमदेव

सम्पादकीय विभाग

सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक

सम्पर्क सूत्र-

चलभाष :-

मो० 89013 87993

॥ ओ३म् ॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

सितम्बर, 2022 (प्रथम)

1 से 15 सितम्बर, 2022 तक

इस अंक में....

1. सम्पादकीय—वेद-प्रवचन 2
2. विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी 3
3. चाणक्य नीति की धारावाहिक व्याख्यान माला 5
4. आओ वेदों का करें प्रचार 7
5. ईश्वर सभी प्राणियों का सर्वोत्तम न्यायाधीश है 8
6. सत्य और वैचारिक क्रान्ति के संगठन आर्यसमाज को अब करवट बदलनी ही होगी 11
7. सीधी व सच्ची सीख 13
8. ओहो! वह समर्पण भाव (3) 14

आर्य प्रतिनिधि पाक्षिक पत्रिका के प्रसार में सहयोग दें

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने योग्य पत्रिका है। यदि आप इसके पाठक बनेंगे तो हमें विश्वास है कि पसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे अन्य लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करके ऋषि ऋण से अनृण होवें।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2000/- रुपये है।

आप उपरोक्त राशि 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' दयानन्दमठ रोहतक के नाम से बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भिजवाकर सदस्य बन सकते हैं।

—सम्पादक

सम्पादकीय...

वेद-प्रवचन

❑ संकलन—उमेद शर्मा, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्[1]। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतः श्रृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥

(यजुर्वेद 36.24, ऋग्वेद 7.66.16, तैत्तिरीय आरण्यक 4.42.5)

अन्वय-तत् चक्षुः पुरस्तात्। देवहितं शुक्रम् उच्चरत् (उदचारयत्) पश्येम शरदः शतम्। जीवेम शरदः शतम्। श्रृणुयाम शरदः शतम्। प्रब्रवाम शरदः शतम्। अदीनाः स्याम शरदः शतम्। भूयश्च शरदः शतात्।

अर्थ-(तत् चक्षुः) उस परोक्ष अदृष्ट परन्तु दूरदर्शी चक्षु परमात्मा ने (पुरस्तात्) पहले ही (देवहितं) दिव्य शक्तियों को प्रेरित करने वाली (शुक्रम्) बीजशक्तियों को (उच्चरत्) अंकुरित कर दिया है, अर्थात् प्राणियों के स्वभाव में उन शक्तियों का बीज डाल दिया है, अतः हम मनुष्यों का कर्त्तव्य है कि (पश्येम शरदः शतम्) सौ वर्षपर्यन्त ज्ञानशक्तियों का विकास करें। (जीवेम शरदः शतम्) सौ वर्ष तक जीवन को उस ज्ञान के अनुकूल विकसित करें। (श्रृणुयाम शरदः शतम्) सौ वर्ष तक वेद को सुनें। (प्रब्रवाम शरदः शतम्) सौ वर्ष तक वेदों का प्रचार करें। (अदीनाः स्याम शरदः शतम्) आयुभर किसी के पराधीन न रहें। (भूयश्च शरदः शतात्) इससे अधिक आयु में भी।

व्याख्या-जगत् के समस्त पदार्थों में जटिलतम पदार्थ है मनुष्य का जीवन। मनुष्य जीवन की जटिलता का कारण यह है कि यह समझ में नहीं आता कि मनुष्य को इस जीवन का कितना भाग स्वयं बनाना है और कितने के लिए दूसरी शक्तियों पर निर्भर रहना है, चाहे वह दूसरे मनुष्यों, जीव-जन्तुओं अथवा जीव-रहित जड़पदार्थों के द्वारा हो।

यदि हम पहाड़, नदी, वृक्ष, सूर्य, चाँद आदि के समान एक निर्जीव मशीन होते तो हमको कोई चिन्ता न थी, न स्वयं सोचने की, न किसी आचार्य, महात्मा या शास्त्रकार के द्वारा हमें उपदेश देने की, परन्तु कठिनाई यह है कि

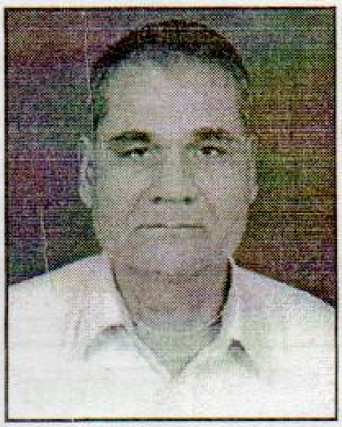

हमारे जीवन में कुछ भाग तो सीधा कुदरत या परमात्म-शक्ति से आता है और कुछ भाग हम सम्पन्न करते हैं। इसका एक अच्छा दृष्टान्त यह है कि जब एक देवी अपने घर में गाजर का हलवा बनाती है, तो गाजरों को स्वयं नहीं बनाती, जैसी मिल जाती है वैसी ले लेती है, परन्तु हलवा बनाने में उसे अपनी बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है। हलवे का जितना भाग उसने बनाया है उसकी वह उत्तरदाता है शेष का नहीं, उसने गाजर को पैदा नहीं किया, हलवे को पैदा किया है। इस प्रकार हलवे के निर्माण में दो कर्त्ताओं का भाग है, एक ईश्वर जिसने गाजर बनाई, दूसरी वह देवी जिसने उस गाजर को दूसरी चीजों के साथ मिलाकर हलवा तैयार कर दिया। जहां तक हलवे का सम्बन्ध है उस स्त्री को शिक्षा देना, विधि-विधान, शास्त्र-उपदेश यह सब हलवा निर्माण तक ही सीमित रहते हैं। गाजर-निर्माण से उस देवी का कोई सम्बन्ध नहीं है। इसी दृष्टान्त को जीवन की सब प्रगतियों पर घटा लीजिए। यदि आपकी आंखें छोटी हैं या काले रंग की हैं, नीले रंग की नहीं तो इसमें आपसे कुछ पूछताछ नहीं हो सकती। परन्तु यदि आंखों को आप साफ नहीं करते या उनका ठीक प्रयोग नहीं करते तो आप दोष के भागी होते हैं कि आंख के प्रयोग में जितना काम आपके अधीन था उसमें आपने त्रुटि की। इस प्रकार आपके जीवन की हर घटना में दो भाग हुए, एक तो कुदरत और दूसरे आप। कुदरत के विषय में आपको कुछ नहीं करना, अपने विषय में आपको ही सब कुछ करना है, अतः आपके विचारने की यह बात है कि आपने अपना काम ठीक किया या नहीं। आपसे कोई यह नहीं पूछता कि अमावश्या की आधी रात के समय सूर्य क्यों नहीं निकलता, क्योंकि सूर्य का निकलना न निकलना आपके अधीन नहीं परन्तु आप दीपक जला सकते थे, इसलिए दीपक के विषय में पूछताछ या आदेश-निर्देश हो सकता है। **क्रमशः अगले अंक में....**

1. ऋग्वेद 7.66.16 का मंत्र केवल इतना ही है—

तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम्।

विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी

❑ संकलन—कन्हैयालाल आर्य, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

गतांक से आगे....

उपर्युक्त कार्यों को करने वाला व्यक्ति ब्रह्म हत्यारे के समान माना जाता है, यह वेद (श्रुति) की आज्ञा है। इस सब के साथ सम्बन्ध रखने वाले को भी प्रायश्चित्त करना चाहिए।

इसमें यह ध्वनित किया है कि दुर्योधन आदि कौरव अपने पूज्य पुरुषों (महात्मा भीष्म पितामह, गुरु द्रोण) के उपदेश को न मानने वाले हैं, उनको मनमाने आदेश देते हैं। शरण में आए हुए पाण्डवों की हिंसा करने में लगे हुए हैं। अभिमानवश पाण्डवों (ब्राह्मणों) की आजीविका के विनाशक हैं (आजीविका से तात्पर्य राज्य से है) राज्य को छीनने के प्रयास में लगे हुए हैं। हे राजन् (धृतराष्ट्र)! इन सब पुत्रों का संग छोड़ दो, प्रायश्चित्त करो अन्यथा पाप के भागी बनोगे।

प्रश्न 6. स्वर्ग=सुख को कौन प्राप्त करता है?

उत्तर-(1) जो व्यक्ति बड़ों की बात मानने वाला है अथवा उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करता है।

(2) जो नीतिनिपुण (नीतिज्ञ) हैं। जो उचित और अनुचित में भेद करना जानता है।

(3) जो अपनी आय का वेदानुसार दान करता है।

(4) जो आश्रित जनों को खिलाकर खाता है।

(5) जो व्यक्ति हिंसा न करने वाला है।

(6) जो व्यक्ति बुरे कार्यों से दूर रहने वाला है।

(7) जो व्यक्ति किये हुए का उपकार मानने वाला (कृतज्ञ) है।

(8) जो व्यक्ति सदैव सत्य बोलता है।

(9) जो नरम या ऋजु स्वभाव वाला है।

उपर्युक्त गुणों को धारण करने वाला व्यक्ति स्वर्ग=सुख को प्राप्त करता है। यहाँ महात्मा विदुर जी धृतराष्ट्र को यह कह रहे हैं—हे राजन्! पाण्डव बड़ों (गुरुजनों) की आज्ञा को मानते हैं, वे नीतिनिपुण हैं, अपनी आय का एक भाग वेदानुकूल दान करते हैं, वे अपने आश्रितों के साथ हिंसा नहीं करते, बुरे कार्यों से दूर रहते हैं, अपने ऊपर उपकार करने वालों के प्रति कृतज्ञ भाव रखते हैं, युधिष्ठिर आदि सत्य का साथ कभी नहीं छोड़ते, उनका स्वभाव भी ऋजु एवं सरल है, अत: वे पाण्डव निश्चित रूप से स्वर्ग को प्राप्त करेंगे परन्तु तुम्हारे पुत्रों में इन गुणों का अभाव है, अत: उनको स्वर्ग की प्राप्ति नहीं होगी।

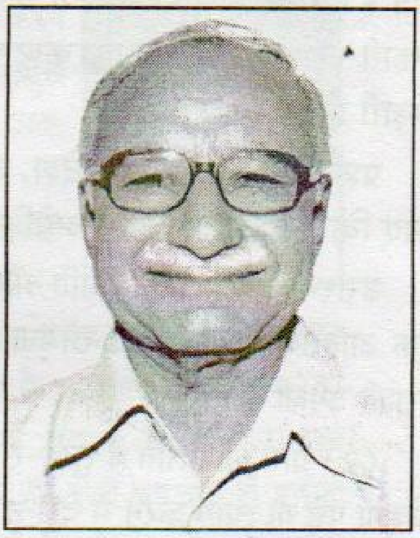

प्रश्न 7. कैसे व्यक्ति दुर्लभ होते हैं?

उत्तर-इस संसार में प्रिय बोलने वाले खुशामदी, चाटुकार लोग तो सुगमता से मिल जाते हैं, परन्तु सुनने में अप्रिय लगने वाले परन्तु पथ्यरूप हितकारी वचन कहने वाले और सुनने वाले दुर्लभ होते हैं। यहाँ पथ्य रूप का प्रयोग किया गया है। दवाई कड़वी होती है, परन्तु स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होती है, इसी प्रकार हितकारी वचन कई बार सुनने में कड़वा होता है, परन्तु उसका प्रभाव उत्तम होता है।

यहाँ विदुर जी यह कह रहे हैं कि हे राजन्! तुम और तुम्हारे पुत्र चाटुकारों खुशामदी लोगों से घिरे हुए हो, हितकारी वचन कहने वाले (मेरे जैसे) दुर्लभ हैं, इसलिए मेरी कड़वी बातों को दवाई के समान हितकारी मानकर मेरी कही हुई बातों का अनुकरण करो, इसी में तुम्हारा कल्याण है।

प्रश्न 8. राजा का वास्तविक मित्र कौन होता है?

उत्तर-जो व्यक्ति राजा के प्रिय तथा अप्रिय का विचार छोड़कर तथा धर्म का आश्रय लेकर राजा को प्रिय न लगने वाली कड़वी दवाई के समान हितकारी वचन कहता है, उस पुरुष से राजा मित्रवान् होता है, अर्थात् वह राजा का सच्चा मित्र होता है।

यहाँ विदुर जी धृतराष्ट्र को यह कह रहे हैं कि हे राजन्! मेरी बातें तुम्हें प्रिय लगें या अप्रिय, परन्तु मैं धर्म का आश्रय नहीं छोड़ूंगा। जो बात तुम्हारे लिए हितकारी

होगी वह कड़वी दवाई देने के समान हितकारी वचन अवश्य कहूँगा। अत: मेरी बातें ध्यान से सुनो। मैं ही तुम्हारा सच्चा मित्र हूँ। अभी भी तुम पाण्डवों का भाग दे दो, इसी में तुम्हारी भलाई है। अन्यथा इस कष्ट को पाने की जिम्मेदारी तुम्हारी होगी।

प्रश्न 9. कुल, ग्राम, प्रदेश, आत्मा की उन्नति के लिए किन-किन का त्याग अपेक्षित है ?

उत्तर-(1) कुल की उन्नति और सुख-शान्ति के लिए एक अहितकर व्यक्ति को छोड़ना पड़े तो उसे छोड़ दें, उसकी उपेक्षा कर दें।

(2) ग्राम की उन्नति व सुख-समृद्धि के लिए कुल को छोड़ना पड़े तो त्याग करने में देरी न करे।

(3) प्रदेश के कल्याण के लिए किसी ग्राम को छोड़ना पड़े तो छोड़ने में ही हित मानना चाहिए।

(4) आत्मा की उन्नति व सुख-समृद्धि के लिए पृथिवी के राज्य को भी छोड़ने में हिचकिचाना नहीं चाहिए।

इसमें उत्तरोत्तर त्याग की भावना का वर्णन है। यह नियम है देश, जाति और समाज की उन्नति का। जो परिवार का नायक या राजा इस नियम को शिरोधार्य नहीं करता, वह अपनी हानि तो करता ही है, अपने कुल, ग्राम, नगर एवं प्रदेश के दु:ख का कारण भी बनता है।

हे राजन्! तुम्हें अपने कुल को बचाने के लिए दुर्योधन, दु:शासन, शकुनि जैसों का त्याग करना होगा। आत्मा की उन्नति के लिए पृथिवी (राज्य) का मोह त्यागना होगा।

प्रश्न 10. धन और स्त्री के सम्बन्ध में मनुष्य को क्या करना चाहिये ?

उत्तर-मनुष्य को चाहिए कि आपत्ति काल के लिए धन बचाकर रखे अर्थात् अपनी आय का कुछ भाग बचाना चाहिये, क्योंकि कई बार अति आवश्यक व्यय करने पड़ सकते हैं। उस समय की कठिनाई से बचने के लिए कुछ धन अवश्य बचाना चाहिये। बचाये हुए धन को व्यय करके स्त्री की रक्षा करे अर्थात् उनकी रक्षा के लिए धन व्यय करना पड़े तो उसकी चिन्ता न करें और अपने आप की रक्षा सदा स्त्रियों और धनों से करे अथवा स्त्रियों और धन-सम्पत्ति दोनों से अपने को बचावे इसमें लिप्त न हो। यही बात यजुर्वेद के 40वें अध्याय के प्रथम मन्त्र में कही गई है—

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध: कस्यस्विद्धनम्।

श्रेष्ठ कार्य से बचे हुए इस धन का भोग कर, लालच मत कर, यह धन किस का है, इस धन का लालच मत कर, क्योंकि यह धन कस्य=किस का है अर्थात् किसी का नहीं। अथवा यह धन कस्य=प्रजापति परमात्मा का है, इसलिए पराये धन का लालच मत कर।

प्रश्न 11. जुआ कैसे हानिकारक है ? विदुर जी ने धृतराष्ट्र को कैसे समझाया ?

उत्तर-प्राचीन समय में जब मानवों में वैर-बुद्धि अति न्यून थी, तब भी जुआ मनुष्यों में वैर उत्पन्न करने वाला देखा गया है, इस समय, जब मानवों में वैर बुद्धि बहुत बढ़ी हुई है, तब तो कहना ही क्या ? इसलिए बुद्धिमान् पुरुष को चाहिए कि हँसी-मजाक या प्रसन्नता के लिए जुआ न खेले। कई प्रसन्नता के लिए भी जुआ खेलते हुए प्राय: आपस में कलह उत्पन्न हो जाता है।

हे राजन्! मैंने जुआ आरम्भ होने के समय भी कहा था कि यह उचित नहीं है, परन्तु तब तुम्हें मेरा यह हितकारी वचन उसी प्रकार अच्छा नहीं लगा था जैसे रोगी को कड़वी दवाई अच्छी नहीं लगती। हे राजन्! यह पाण्डव चित्र-विचित्र पंखों वाले मोरों के सदृश हैं और तुम्हारे पुत्र इनके सम्मुख कौओं के समान हैं तो तुम इन कौओं के द्वारा मोरों को पराजित करने की बात पर विचार कर रहे हो, परन्तु समय आने पर पछताओगे क्योंकि पाण्डव सिंह के समान पराक्रमी हैं और तुम्हारे पुत्र उनके सामने गीदड़ों के बराबर हैं इसलिए उचित यही है कि यदि इन सिंह रूपी पाण्डवों के मन्यु से तुम अपने पुत्रों को बचाना चाहते हो तो इनका राज्यरूपी भाग उन्हें सहर्ष दे दो अन्यथा तुम्हें पछताना पड़ेगा।

प्रश्न 12. कैसे स्वामी पर सेवक विश्वास करते हैं और उन्हें छोड़ते नहीं हैं ?

उत्तर-जो स्वामी के हित में लगे हुए भक्त भृत्य (श्रद्धा की भावना रखने वाले सेवक) के प्रति क्रोध नहीं करता, सेवक उस स्वामी पर विश्वास करते हैं, आपत्ति आ जाने पर भी वह ऐसे स्वामी को कभी नहीं छोड़ते। **क्रमश:...**

चाणक्य नीति की धारावाहिक व्याख्यान माला

❑ आचार्य सोमदेव, आर्ष गुरुकुल मलारना चौड़, सवाई माधोपुर (राज०)

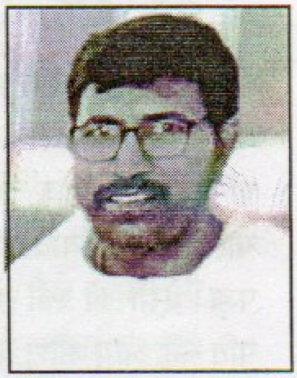

तीसरा प्रवचन

दुष्टा भार्या शठं मित्रं भृत्यश्चोत्तरदायकः।
ससर्पे गृहे वासो मृत्युरेव संशयः॥

मृत्यु का भय हो जाता है। पांच चीजें आचार्य चाणक्य ने कही है। **दुष्टा भार्या**-घर में पत्नी दुष्ट हो अर्थात् पति के अनुकूल न हो, अपनी मन-मरज़ी करती हो, आए हुए अतिथि का सत्कार न करती हो, गृहकार्य में निपुण न हो, मूर्ख हो, ऐसी स्त्री जिस घर में हो, ऐसी पत्नी जिसकी हो वहाँ शान्ति नहीं मिलती। और कहा है **मृत्युरेव न संशयः**-वह मृत्यु की ओर ही धीरे-धीरे जा रहा होता है। जो व्यक्ति घर-परिवार में हर समय तनाव में रहता हो, लड़ाई-बखेड़ा रहता हो, घर-परिवार में वहाँ मृत्यु तो होनी ही है। वहाँ रोग, दोष, अशान्ति, लड़ाई-बखेड़ा नित्यप्रति बना रहता है। इसलिए कहा **दुष्टा भार्या**-पत्नी दुष्ट हो। दुष्ट के बहुत सारे अर्थ लिए जा सकते हैं। आचारहीन अर्थ भी लिया जा सकता है। आचरण से हीन हो, चरित्र से हीन हो। **दूसरा**-कठोर बोलने वाली हो, कभी अच्छे से बात न करती हो। **तीसरा**-आए हुए अतिथियों का सत्कार नहीं करती। पति बाहर से कोई भी अतिथियों को ले आये तो पति का सम्मान, पति की इज्जत पत्नी के हाथ में होती है। यदि आए हुए अतिथि बड़े अच्छे से सत्कारपूर्वक भोजनादि करवाती है, प्रेमपूर्वक जो भी कुछ व्यवहार होता है, वह हो जाता है तो आया हुआ अतिथि चारों तरफ गुणगान करता घुमेगा कि भाई फलाने के घर में गये थे, बड़ा आदर-सत्कार हुआ और यदि आदर-सत्कार न होवे और पत्नी आए हुए अतिथि से दुर्व्यवहार करे तो पति का ही अपमान होगा, परिवार का ही अपमान होगा। चाणक्य ने ही पूछा था कि सबसे तेज आवाज किसकी होती है, लोगों ने कहा था कि सबसे तेज आवाज हमें तो घण्टी की लगती है। जब घण्टी बजती है तो बहुत दूर-दूर तक आवाज जाती है। किसी ने कहा सबसे तेज आवाज शंख की है। शंख बजता है तो बहुत दूर तक गूँजता है। किसी ने और वाद्ययंत्रों का नाम ले लिया। आचार्य चाणक्य कहते हैं कि जो-जो तुमने यह बताये हैं इनकी आवाज दो किलोमीटर तक चली जायेगी और दूर तक जा सकती है, लेकिन देश-देशान्तर तक किसकी आवाज जाती है तो उस समय आचार्य चाणक्य कहते हैं कि सबसे तेज आवाज तवे की होती है। तवे की तेज आवाज अर्थात् जो गृहिणी उस तवे पर रोटियाँ बनाती हैं, भोजन बनाती हैं और अतिथि का सत्कार किया गया है वह अतिथि उस गृहिणी की प्रशंसा, उस घर की प्रशंसा जहाँ-जहाँ जाएगा वहाँ-वहाँ करेगा। कहने का तात्पर्य है कि स्त्री के हाथ में ही परिवार का सम्मान होता है। हमारे भजनोपदेशक पण्डित नरेदव जी सुना रहे थे कि कभी उनके गुरुजी पण्डित किशोरीलाल होते थे। दोनों कहीं प्रचार के लिए गए हुए थे। प्रचार किया और प्रचार जब पूरा हुआ तो एक श्रद्धालु आ करके कहता है कि पण्डित जी, मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ। आज मेरे घर पर दूध पीने आ जाओ। मेरे घर पर मैं दूध पिलाना चाहता हूँ। कहते हैं जब ये दोनों गये, बैठक में उस व्यक्ति ने इनको बिठा दिया और अन्दर जा करके पत्नी को कहा कि पण्डित लोग आए हैं, अतिथ हैं, विद्वान् हैं। दो ग्लास दूध दे दे। दो गिलास दूध की जब बात आई तो उस महिला ने अपने पति को चार सुना डाली। तेरे पण्डित तो रोजाना आते रहते हैं, कहाँ से दूध ले करके आयें। रोज-रोज तेरे अतिथि यहाँ घर पर बैठे रहते हैं। चार बातें सुना दी। पति ने हाथ जोड़ करके कहा कि बेइज्जती मत कर, बाहर बैठे हैं, आवाज भी बाहर जायेगी। दो गिलास दूध दे दे। दूध नहीं दिया। नहीं दिया तो कहते हैं कि उस व्यक्ति ने दो ग्लास खुद ही उठाए और मिट्टी की हांडी में दूध पक रहा था। दूध गरम करने के लिए हारे पर रख देते थे, कंडे में आग होती थी, उस पर घण्टों-घण्टों वह दूध पकता रहता तो मिट्टी के बर्तन से जब वह व्यक्ति दूध ग्लास में डालने लग गया। उधर से पत्नी दौड़ करके आई। एक तरफ से मिट्टी का बर्तन पकड़ लिया, दूध नहीं डालने दे रही थी। इधर से दूध डालने के लिए जोर लगा रहा था, उधर से वह दूध न

डल जाये रोकने के लिए पत्नी जोर लगा रही थी। इस जोराजोरी में मिट्टी का बर्तन ही फट गया। मिट्टी का बर्तन बीच से फट गया। सारा दूध राख में चला गया। एक बूंद अतिथियों को नहीं पिलाया। उस व्यक्ति के हृदय में क्या बीत रही होगी, क्या प्रभाव उस पत्नी का ले रहा होगा वह। वह व्यक्ति बाहर जा करके हाथ जोड़कर कहता है कि पण्डित जी, आज दूध बिल्ली ने गिरा दिया, जो भी झूठ बोला होगा। व्यक्ति इज्जत बचाता है अपनी, झूठ बोलना पड़ा। ऐसी जो स्त्री होती हैं, ऐसी पत्नी होती हैं, वे अपने पति की आयु क्षीण कर रही होती हैं। इसलिए कहा है कि **मृत्युरेव न संशयः**। आचार्य चाणक्य कहते हैं मृत्यु ही है। वैसे तो कड़वा चौथ का भी व्रत करती है और उधर से यह व्यवहार है तो ऐसे व्रतों का कोई मतलब भी नहीं रह जाता। ऐसे ही दूसरी तरफ भी घटा सकते हैं। लेकिन दुष्टा भार्या ही क्यों? दुष्ट पति भी हो सकता है। यदि दुष्ट पति है तो वह पत्नी के लिए घातक है। दोनों के लिए परस्पर यह बातें घटती हैं। आगे और कहा-**शठं मित्रं**-शठं मित्र का तात्पर्य है धूर्त मित्र। यदि किसी धूर्त से मित्रता हो जाती है तो धूर्त मित्र धोखा देगा जीवन में। इसलिए सावधान तो रहना होता है मित्र के विषय में कि मित्र हो तो श्रेष्ठ हो, मित्र बुराइयों को दूर करने वाला हो, बुराइयों में फंसाने वाला न हो। पढ़ाई छुड़वा दी। पढ़ाई छोड़कर हम उन्हीं के साथ घूम रहे हैं। काहे के मित्र हुए ऐसे, मित्रता बनी हुई है। कुछ भी डंडा लेकर के बनाया, घूम रहे हैं फालतू में, काहे की मित्रता। मित्र वह होते हैं जो पढ़ाई में लगा देवे, पढ़ाई छुड़ाने वाला मित्र नहीं होता। खुद पढ़ते हों और पढ़ाई में लगाते हों वह श्रेष्ठ माने जाते हैं अन्यथा कहा है-**शठं मित्रं**-दुष्ट मित्र। यदि मित्र श्रेष्ठ हो तो बड़ा सौभाग्य होता है, उस व्यक्ति का अन्यथा धूर्त लोग अपनी धूर्तता को चाहे कितनी भी गहरी मित्रता हो, चाहे कितना भी प्रेम दिखाते हों, वह धूर्तव्यक्ति कहीं न कहीं, कभी न कभी अपनी धूर्तता दिखाएगा और धोखा देगा।

एक व्यक्ति ने दो लोगों को मित्र बना लिया। दो लोगों को मित्र बनाया तो ऐसे धूर्त लोगों के लक्षण भी कुछ होते हैं। लक्षण क्या होते हैं-बाहर से चेहरे पर मुस्कुराहट रहेगी और वाणी भी बड़ी मीठी-मीठी बोलेगा, बहुत अच्छा-अच्छा बोलेगा, लेकिन उनके हृदय में बड़ी कलुषितता होती है, कालापन होता है। चेहरे पे मुस्कुराहट, वाणी में मिठास, वाणी से बड़ाई करेगा लेकिन हृदय में छल-कपट होता है ऐसे लोगों के। जब वह दो मित्र बनाए तो काफी दिन इकट्ठा रहे। उस धूर्त व्यक्ति ने योजना बना ली कि इन दोनों को बेच करके पैसा कमाना चाहिए। ऊपर से तो मित्र है और अन्दर से योजना है कि बेच करके पैसा कमाऊँगा। कहीं ऐसे भी लोग होते हैं, पहले ज्यादा होते थे जो गुलामों को खरीद लेते थे, दास बना लेते थे, तो ये धूर्त व्यक्ति उनसे मिला हुआ था। दोनों को ले गया और ले जा करके चिमटा लिए हुए था, चिमटा दिखा दिया। चिमटा दिखाया तो चिमटे के दो पो होते हैं, दो दिखाए तो सामने वाला समझ गया कि दो को लेकर आया है। ऐसे जो धूर्त मित्र होते हैं जीवन से खिलवाड़ करते हैं। इसलिए कहा है कि मृत्युरेव न संशयः-दुष्ट मित्रों को नहीं करना होता, शठ मित्र नहीं होता करने को। धूर्त लोग धोखा देंगे। चोर को तो वह कह देता है चोरी कर ले और जिसके घर चोरी करने के लिए कहा है उसको भी बता देता है कि तेरे घर पर आयेगा। माने चोर से भी मित्रता है और जिसके घर चोरी करवा रहा है, उससे भी मित्रता है। दोनों के सामने अच्छा बनना चाहेगा ऐसा धूर्त व्यक्ति। इसलिए ऐसे धूर्त मित्रों से बचना होता है नहीं तो आचार्य चाणक्य कहते हैं-**मृत्युरेव न संशयः**। और कहा-**भृत्यश्च उत्तरदायकः**-जो नौकर-चाकर हों, भृत्य हों, सेवक हो वह उत्तरदायकः अपने मालिक को जुबान लड़ाते हों तो ऐसे नौकरों का कोई काम नहीं होता। ऐसे नौकरों को जो रखता है, जो जवान लड़के हों, उलटा जवाब देते हों, काम न करते हों। स्वामी, मालिक तो उसके भरण-पोषण में लगा हुआ है, मासिक वेतन देता है और नौकर उसी से जुबान लड़ाता है तो कहा है कि ऐसे नौकर भी नहीं रखने होते, ऐसे नौकरों को जितना जल्दी छोड़ दिया जाता है उतना ठीक रहेंगे। बहुत सारे लोग होते हैं ऐसे। हमारे आर्यसमाज के बहुत ही विशेष व्यक्ति हुए। ऋषि के प्रति श्रद्धा बहुत थी तो उन्होंने महर्षि के ग्रन्थों के प्रकाशन की एक व्यवस्था की और एक पृष्ठ का गठन किया '**आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट**'। लाला दीपचन्द जी ने आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट की स्थापना की और इस ट्रस्ट का आज भी मुख्य काम है महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थों का प्रकाशन करना। आज तक किसी भी प्रकाशक ने इतनी

संख्या में सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि आदि नहीं छापी होंगी। लाखों-लाखों प्रतियाँ उस ट्रस्ट के माध्यम से छप चुकी हैं। सैकड़ों शायद संस्करण निकल चुके होंगे। इतना बड़ा उद्देश्य लेकर के आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट की स्थापना की। नौकर रख रखे थे लाला दीपचन्द जी ने। एक नौकर नेपाल का था और ऐसे जो दुष्ट नौकर होते हैं वह भी ऊपर से अच्छा दिखायेंगे, अन्दर काले होते हैं। उस नौकर ने भी ऊपर से बहुत अच्छा व्यवहार कर रखा था। जबान तो नहीं लड़ाता था और लाला दीपचन्द उसको बेटे की तरह मानने लग गये थे। इतना विश्वास करते थे। नेपाल में कोई पुस्तकालय था, उस पुस्तकालय में कोई पुरानी प्रतियाँ रखी होंगी जो नए रूप से छपवाना चाहते होंगे। पुस्तकों के तो प्रेमी थे ही। मनुस्मृति आज जो विशुद्ध मनुस्मृति छपती है और छपी है, सबसे ज्यादा आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट से छपी। लाला दीपचन्द ने उस नौकर को भेजा उस पुस्तकालय में तो उस धूर्त नौकर ने वापस सूचना दी इनको कि बाबूजी इतने पैसे लेकर के आ जाओ, वह किताब मिल गई है। ये पैसे ले करके गये और पैसे के लालच में उस धूर्त नौकर ने पितातुल्य स्वामी को, पितातुल्य मालिक के साथ इतना बड़ा धोखा किया कि लाला दीपचन्द जी की मृत्यु का कारण वही बना। इतने श्रेष्ठ व्यक्ति, हृदय के पवित्र व्यक्ति जो ऋषि के प्रति समर्पित थे। नौकर भी धोखा दे देते हैं। इसलिए कहा है-भृत्यश्च उत्तरदायकः-केवल उत्तरदायकः नहीं। ऐसे छली-कपटी बहुत हैं, इधर हरियाणा, पंजाब के घरों में रहते हैं। घरों में रह करके धीरे-धीरे घर का सब कुछ जान-समझ लेते हैं और मौका पा करके एक दिन सब कुछ निकालकर भाग जाते हैं और पता भी नहीं लगता कहाँ गये। आजकल नए-नए षड्यन्त्र हो रहे हैं। मुसलमानों के लड़के घरों में नौकरी कर लेते हैं, मीठा-मीठा व्यवहार करके और हिन्दू लोग भी बहुत जल्दी से उनसे प्रभावित हो जाते हैं, सारे भेद जान लेता है। घर की महिलाओं को दूषित करता है या फंसा लेता है या सब कुछ लूट करके एक दिन भाग जाता है। इसलिए नौकर जो रखा जाये सोच-समझकर के रखा जाए, ध्यान से रखा जाये। आगे कहा-ससर्पे च गृहेवासी। आचार्य चाणक्य कहते हैं कि मृत्युरेव न संशयः। वहाँ मृत्यु ही होगी संशय नहीं करना चाहिए उसमें। चौथी बात कही है पाँच नहीं है। चार ही बातें कही हैं-ससर्पे च गृहे वासो-जिसघर में सांप रहता हो, सांप जिस घर में वास करता हो, वहाँ रहेंगे तो कभी न कभी सांप काट ही लेगा। छिप करके रहता है। हम चारपाई पर सो रहे थे और नीचे पैर रखे हमने। सुबह-सुबह तो सांप नीचे बैठा था। उस पर पैर रखा तो तत्काल सांप काटेगा। मरेगा ही आदमी या कोई और दुर्घटना हो सकती है सांप के साथ। और इस सर्प से जहरीले लोग भी ले सकते हैं। जिस घर में जहरीले लोग रहते हों, जहरीले मनुष्य रहते हों, वहाँ मृत्यु ही होती है। इसमें संशय नहीं करना चाहिए।

आओ वेदों का करें प्रचार

आओ वेदों का करें प्रचार।
गली-गली घर-घर जाकर,
नगर ग्राम और महानगर में,
बालक-वृद्ध और जन-जन में,
वैदिक ऋचाओं का हो संचार।

तान्त्रिकों का बढ़ा मकड़जाल,
भूत-प्रेत का चक्कर घर-घर,
डरा रहे भोली जनता को,
राहु-केतू का भय दिखाकर,
गुरुडम की हो रही भरमार।

ऐठ रहे ठग धन जनता का,
आभूषण लूटकर ले जाते।
हवा बयार का भय दिखा,
हाथ कटोरा पकड़ा जाते।
हे आर्यो इनका करो उद्धार।

मात-पिता गुरु वृद्ध जनों का,
नहीं हो रहा आज सम्मान।
वृद्धाश्रम खुलते जा रहे,
दरार सम्बन्धों में पड़ गई,
फीके पड़ गए हैं संस्कार।

—डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह, चन्द्रलोक कॉलोनी,
खुर्जा, मो० 8979794715

ईश्वर सभी प्राणियों का सर्वोत्तम न्यायाधीश है

❑ मनमोहन कुमार आर्य, 196 चुक्खूवाला-2, देहरादून-248001, मो० 9412985121

यह सारा संसार ईश्वर की कृति है और सभी प्राणी अपने अपने शुभाशुभ कर्मों का फल भोगने के लिए मनुष्यादि अनेक योनियों में ईश्वर द्वारा उत्पन्न किये गये हैं। सभी प्राणियों को जन्म व मृत्यु भी ईश्वर ही प्रदान करता है जिसका आधार हमारे पूर्वजन्मों के कर्म होते हैं। हमने अपने पूर्वजन्मों में जो कर्म किये हैं, उनके फल भोगने के लिये ईश्वर ने हमें यह जन्म दिया है। हमने अधिकांश अच्छे व कुछ अशुभ कर्म किये होंगे इसीलिये हमें मनुष्यजन्म मिला है। हम इस जन्म में अपने पूर्वजन्मों के कर्मों का फल भोग रहे हैं। मनुष्य योनि उभय योनि है। इस योनि में हम शुभाशुभ कर्म करते भी हैं और अपने पूर्वजन्मों के कर्मों का फल भी भोगते हैं। इस मनुष्य जन्म में हम जो कर्म करते हैं वह दो श्रेणी के होते हैं। प्रथम क्रियमाण कर्मों का फल हमें इसी जन्म में मिल जाता है और दूसरे संचित कर्म वह कर्म होते हैं जिनका फल हमें अगले जन्म अर्थात् पुनर्जन्म होने पर मिलेगा। मनुष्य से इतर अन्य पशु, पक्षी आदि सभी योनियां भोग योनियां हैं। इन योनियों में जन्म का कारण यह होता है कि उनके कर्मों के खाते में आधे से अधिक कर्म अशुभ व पाप कर्म थे इसलिये उन्हें मनुष्य जन्म न मिलकर उनकी योनि में जन्म मिला जहां वह अनेक प्रकार के दु:ख भोग रहे हैं। यदि देश की जेलों की चर्चा करें तो मनुष्य उत्तम जेल में हैं जहां अनेक सुख सुविधायें भी हैं इसे ए श्रेणी की जेल कह सकते हैं। पशु-पक्षी-कीट-पतंग आदि इतर योनियां बी व सी श्रेणी की जेलें हैं जहां जीवात्मायें अपने कर्मों के अनुसार कुछ सुख व अधिकांश दु:ख भोग रही हैं। दु:ख इस प्रकार से कि उन्हें सोचने के लिए मनुष्यों के समान न तो बुद्धि दी गई है और न ही बोलने के लिये वाणी। उनके पास हमारी तरह से हाथ भी नहीं है। वह प्राय: मनुष्य की तुलना में अल्पायु होते हैं। मनुष्य योनि में अन्य अनेक प्रकार की सुविधायें हैं जो पशु-पक्षियों की योनियों में नहीं हैं। ईश्वर ने यह विधान अपनी सर्वव्यापकता, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान्, सबका साक्षी और अपने अर्य्यमा अर्थात् न्यायाधीशस्वरूप व शक्ति के आधार पर किया है।

ईश्वर मे अनन्त गुण, कर्म व स्वभाव हैं। इसके अनुसार उसके गुणवाचक, कर्मवाचक तथा स्वभाववाचक नामों सहित सम्बन्ध वाचक नाम भी होते हैं। ईश्वर का एक नाम 'अर्यमा' है। ऋषि दयानन्द अपने 'सत्यार्थप्रकाश' ग्रन्थ के प्रथम समुल्लास में लिखते हैं कि जो सत्य न्याय के करनेहारे मनुष्यों का मान्य और पाप तथा पुण्य करने वालों को पाप और पुण्य के फलों का यथावत् सत्य-सत्य नियमकर्ता है, इसी से उस परमेश्वर का नाम 'अर्यमा' है। इससे यह ज्ञात होता है कि ईश्वर न्यायकारी व ब्रह्माण्ड के अनन्त जीवों का अकेला न्यायाधीश है। अन्तर्यामी रूप से सभी आत्माओं का साक्षी होने से कोई भी प्राणी व जीव परमात्मा के सत्य न्याय से बच नहीं सकता है। यदि कोई व्यक्ति मनुष्य योनि में छुपकर कोई अशुभ कर्म, अन्याय, शोषण, अत्याचार या पापकर्म करता है तो वह ईश्वर से नहीं छिप पाता और सर्वशक्तिमान् होने के कारण उस मनुष्य को ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार उसका उपयुक्त फल, अच्छे कर्म के लिये पारितोषिक और बुरे कर्म के लिये दण्ड, यथासमय मिलता है। कर्म-फल सिद्धान्त पर आधारित प्रसिद्ध शास्त्रीय पंक्तियां हैं **'अवश्यमेव हि भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।'** अर्थात् मनुष्य को अपने किये हुए शुभ व अशुभ कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है। वह इससे बच नहीं सकता। यह इसलिये सम्भव होता है कि ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान्, आलस्य व निद्रा से रहित जागृत, सावधान व सजग रहता है।

मनुष्य के मन में एक स्वाभाविक प्रश्न होता है कि वह कौन है, यह संसार कब, किसने, कैसे व क्यों बनाया? इसका सन्तोषजनक उत्तर वैदिक धर्म और ऋषि दयानन्द जी के साहित्य में मिलता है जिससे मनुष्य का पूर्ण समाधान हो जाता है। मनुष्य एक चेतन, अल्पज्ञ, अनादि, अविनाशी, अमर, नित्य, ससीम, एकदेशी, शाश्वत व सनातन जीवात्मा

है। ईश्वर भी सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अनादि, अनन्त, निर्विकार, अनुपम, जीवों के कर्मों का फलदाता तथा सृष्टिकर्ता आदि असंख्य गुणों से विभूषित है। मनुष्य का शरीर जड़ है और वह सृष्टि के पंचभौतिक तत्त्वों व पदार्थों से मिलकर बना है। शरीर नाशवान है परन्तु इसके भीतर जो चेतन जीवात्मा है वह अनादि व अमर है और कर्मानुसार जन्म व मृत्यु को प्राप्त होता रहता व शरीर बदलता रहता है। शरीर का बदलना ईश्वर के आधीन है और वह जीवात्मा के मनुष्य योनि के कर्मों के अनुसार परमात्मा से मिलता है। सभी जीवात्माओं व हमारे इस जन्म से पूर्व भी अनन्त बार अनेक वा प्राय: सभी योनियों में कर्मानुसार जन्म हो चुके हैं और यह सिलसिला व परम्परा अन्तहीन है, सदैव चलती रहेगी। सृष्टि की प्रलय व उत्पत्ति होती रहेगी और हमारी आत्मा अपने शुभ व अशुभ कर्मों के अनुसार ईश्वर की कृपा, न्याय और दया से जन्म लेती रहेंगी और इस प्रकार से सृष्टि-प्रलय व जन्म-मृत्यु का क्रम अनन्त काल तक चलता रहेगा।

हम जिस संसार व सृष्टि में रह रहे हैं उसे 1.96 अरब वर्ष पूर्व ईश्वर ने आरम्भ किया है। उसी ने इस पूरे ब्रह्माण्ड को बनाया और सभी प्राणियों को जन्म दिया और यह क्रम आदिकाल से निरन्तर चल रहा है। सृष्टि का निर्माण कैसे हुआ, इसका उत्तर है कि ईश्वर सर्वज्ञ व सर्वव्यापक है। उसको एक वैज्ञानिक की तरह सृष्टि की उत्पत्ति का पूर्ण व यथोचित ज्ञान है। वह इस सृष्टि को बनाने से पूर्व भी अनन्त बार ऐसी ही सृष्टि को बना चुका है और आगे भी बनायेगा। हम प्रतिदिन एक लेख लिखते हैं तो इससे यह अनुमान होता है कि हम आगे भी यह कार्य करते रहेंगे। हम आज लेख लिख रहे हैं तो इसका कारण हमें पूर्व का अभ्यास होना भी है। इस नियम के अनुसार परमात्मा ने इस सृष्टि को बनाया और चला रहा है। इससे यह ज्ञान होता है कि उसने इससे पूर्व भी अनेक बार ऐसी सृष्टियों को बनाया है और आगे भी बनायेगा। अत: यह सृष्टि इसके निमित्तकारण ईश्वर से उत्पन्न हुई है। परमात्मा ने इसे सत्त्व, रज व तम गुणों वाली सूक्ष्म जड़ प्रकृति से बनाया है जो ईश्वर के नियंत्रण में रहती है। सृष्टिकर्ता ईश्वर सर्वातिसूक्ष्म, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान् होने से सृष्टिरचना एवं इसके पालन आदि का कार्य अपने स्वभाव के अनुकूल अनादि काल से करता आ रहा है व करता रहेगा।

एक प्रश्न यह है कि यह सृष्टि क्यों व किसके लिये बनाई गई है? इसका उत्तर है कि अनन्त जीव ईश्वर की सन्तान व प्रजा हैं। उन्हें सुख व मोक्ष का आनन्द देने के लिये ईश्वर सृष्टि को उत्पन्न करने के साथ पालन करते हैं और यथा समय इसकी प्रलय करते हैं। इस विषय का पूरा ज्ञान ऋषि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश में दिया है। जिज्ञासु बन्धुओं को सत्यार्थप्रकाश पढ़ना चाहिये। सत्यार्थप्रकाश में दिया गया ज्ञान हमें परमात्मा के ज्ञान वेदों सहित ऋषि दयानन्द के पूर्ववर्ती ऋषियों के ग्रन्थों आदि से होकर प्राप्त हुआ है। मनुष्य का जन्म सत्यासत्य को जानने सहित विद्या प्राप्त कर सत्य का आचरण करने तथा कर्मफल बन्धनों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त करने के लिए हुआ है। जो मनुष्य बिना वेद विद्या को जाने सांसारिक ज्ञान की पुस्तकों के ज्ञान को प्राप्त कर धनोपार्जन में ही लगे रहते हैं वह अपने इस दुर्लभ मनुष्य जीवन का सदुपयोग करने के स्थान पर स्वयं को दु:खरूपी बन्धनों में ही बांधते हैं। मनुष्य जीवन में ईश्वरोपासना सहित अग्निहोत्र आदि पंच महायज्ञों का करना अति महत्त्वपूर्ण है। जो मनुष्य इन कर्तव्यों का पालन करते हैं, वह धन्य हैं और उनका परजन्म सुधर रहा है। यह बात वेद के प्रमाणों व ऋषि-मुनियों के ग्रन्थों से स्पष्ट विदित होती है जिसकी स्वीकृति शास्त्रज्ञ ज्ञानी लोग भी देते हैं।

हम शरीर नहीं अपितु जीवात्मा हैं। शरीर तो हमें ईश्वर ने शुभ व पुण्य कर्म करने के लिये साधन व उपकरण के रूप में दिया है। हमें इसका सदुपयोग ईश्वर की भावना व अपेक्षाओं के अनुरूप करना है। ईश्वर हमारा स्वामी है व हम उसके सेवक हैं। जीवात्मा और ईश्वर का व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। ईश्वर हमारा माता, पिता, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है। हम सत्य पोषित कर्मों वा सत्याचारण करेंगे तो हम ईश्वर से पुरस्कृत होंगे और वेद निषिद्ध कर्मों को करेंगे तो ईश्वर से दण्डित होंगे। हमारे शरीर में जो बाल, किशोर, युवा, प्रौढ़, वृद्ध आदि अवस्थायें आ जा रही हैं यह सब ईश्वर की देन व व्यवस्थायें हैं। संसार में यह सिद्धान्त सृष्टि की आदि से विद्यमान है कि जिसका जन्म व

उत्पत्ति होगी उसकी मृत्यु व नाश भी अवश्य होगा। हमें भी कालान्तर व भविष्य में मृत्यु को प्राप्त होना है। तब हमारा अर्थात् हमारी आत्मा का क्या होगा, इस पर हमें विचार करना चाहिये। इसका यही उत्तर है कि हमारा पुनर्जन्म होगा और उसका आधार हमारे इस जीवन के वह कर्म होंगे जिसका हमने भोग करना है। पुण्य व पाप दोनों प्रकार के कर्मों के संस्कार हमारी आत्मा पर रहते हैं और ईश्वर के ज्ञान में भी विद्यमान रहते हैं। कृतकर्मों का फल बिना भोगे हमारे कर्मों का क्षय नहीं होगा। शुभकर्मों के परिणाम से हमें सुख मिलेगा और अशुभ व पाप कर्मों से हमें दु:ख भोगना होगा। ईश्वर न्यायाधीश है। किसी जीवात्मा का कोई कर्म कभी उसकी दृष्टि से बचा नहीं है। हमने अपने एक वैदिक विद्वान् मित्र को रुग्णावस्था में चिकित्सक के सम्मुख यह कहते देखा व सुना था कि मैंने इस जन्म में कोई पाप कर्म किया हो, यह मुझे स्मरण नहीं है और पूर्वजन्म के कर्मों का मुझे ज्ञान नहीं है। उनका संकेत था कि मेरी बीमारी पूर्वजन्मों के कारण हो सकती है। हमें दोनों ही सम्भावनायें लगती हैं। पूर्वजन्म व इस जन्म दोनों के कर्म हो सकते हैं हमारे जीवन में होने वाले सुख व दु:खों के कारण। वैदिक धर्म और आर्यसमाज के विद्वान् कर्मफल सिद्धान्त पर पूर्ण आस्था रखते आये हैं। इसका कोई विकल्प है ही नहीं। देश व विश्व के जो अधिकांश लोग अपनी अज्ञानतावश कर्म-फल सिद्धान्त की उपेक्षा करते हैं उन्हें भी अपने पाप कर्मों का फल भोगना पड़ता है। यदि दुष्ट काम करने वाले कर्मफल-रहस्य को जान लें तो वह सभी हिंसा का त्याग कर देंगे, ऐसा अनुमान होता है। ज्ञानी मनुष्य इसीलिए पाप नहीं करते क्योंकि वह पापों के परिणाम दु:खों से बचना चाहते हैं। पाप कर्म हम तभी करते हैं जब हमें उन कर्मों से होने वाले दु:खों का ज्ञान नहीं होता। पानीपत के पास की एक पुरानी घटना है। पराधीनता काल में एक मन्दिर में आर्यसमाज के विद्वान् पं० गणपति शर्मा कथा कर रहे थे। कथा कर्मफल सिद्धान्तों पर चल रही थी। वहां मुगला नाम का एक इनामी डाकू डाका डालने जा रहा था। पंडित जी बोल रहे थे कि जो मनुष्य जैसा कर्म करता है उसका फल उसे अवश्य ही भोगना पड़ता है। कोई कर्म के फल से बच नहीं सकता। यह शब्द डाकू के कानों में पड़ गये। उसने अपने साथियों को अपनी कार्यवाही करने से रोक दिया और मन्दिर में आकर पंडित जी का प्रवचन सुनने लगा। कथा समाप्ति पर उसने पंडित जी से प्रश्नोत्तर किये। उसने पूछा कि क्या उसके बुरे कर्म उसके दान आदि अच्छे कर्मों में समायोजित नहीं होंगे? पंडित जी ने उसे समझाया कि अच्छे कर्मों का फल अलग से और बुरे कर्मों का फल अलग से भोगना होगा। वह पंडित जी की बात को समझ गया और उसने हमेशा के लिये डाका डालना बन्द कर दिया और धर्म के काम करना आरम्भ कर दिया। कर्म-फल सिद्धान्त सत्य, यथार्थ व व्यवहारिक सिद्धान्त है। यह बात शुद्ध, नि:स्वार्थ व पवित्र हृदय वाले व्यक्ति सरलता से जान सकते हैं।

ईश्वर सचमुच सर्वशक्तिमान् निष्पक्ष अद्वितीय न्यायाधीश है। जिसे भविष्य व परजन्मों में सुख की कामना हो वह वेदों का स्वाध्याय, ईश्वरोपासना तथा यज्ञ आदि श्रेष्ठ कर्मों को करें। यह सुनिश्चित है कि हम जो भी कर्म करेंगे उसका फल हमें जन्म-जन्मान्तरों में अवश्य ही भोगना होगा और वह फल हमें जगतपति न्यायाधीश ईश्वर हमें देंगे। इसके लिये जो आवश्यक होगा ईश्वर करेगा। सम्भव है कि अज्ञानवतावश किए हमारे पाप कर्मों के कारण हमें परजन्म में पशु व पक्षी योनियों में भी जाना पड़े। इस चर्चा को यहीं पर विराम देते हैं।

आवश्यक सूचना

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक के सभी ग्राहकों को सूचित किया जाता है कि जिन ग्राहकों का जो भी बकाया शुल्क बनता है, वह बकाया शुल्क सभा कार्यालय में जमा करें या मनीऑर्डर द्वारा भेजने का कष्ट करें ताकि हम आपकी पत्रिका समय पर भेजते रहें। शुल्क भेजते समय आप ग्राहक संख्या व मोबाइल नंबर अवश्य लिखें।

—रघुवरदत्त, पत्रिका लिपिक, मो० 7206865945

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक समाचार-पत्र की सदस्यता ग्रहण कर तथा धार्मिक एवं सामाजिक आयोजनों में 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' को सहयोग राशि भेजकर वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में सहभागी बनिये।

सम्पर्क—मो० 08901387993

आर्ष सत्य वैचारिक क्रान्ति के संगठन आर्यसमाज को अब करवट बदलनी ही होगी

❑ पण्डित उम्मेद सिंह विशारद, वैदिक प्रचारक

आर्यसमाज सत्य का मंच है

सदियों के उपरान्त महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इस संसार के मनुष्यों को सत्य ईश्वर, सत्य धर्म, सत्य देवता, सत्य साम्यवाद विचार धारा, सत्य राष्ट्रभक्ति, सत्य ईश्वर-स्तुति, प्रार्थना, उपासना का मार्ग दिखाया और सत्य के प्रचारक आर्यसमाज की स्थापना करी और आर्यसमाज अपने जन्मकाल से आज तक अपनी पूरी शक्ति से सत्य का प्रचार कर रहा है और करता रहेगा। आर्यसमाज केवल सत्य का पक्षधर है, जबकि सत्य का कहना बहुत कठिन होता है और उस पर चलना चलाना और भी कठिन है। आर्यसमाज मानता और जनता है। सत्संग केवल सत्य का ही हो सकता है और सत्य केवल ईश्वरीय वाणी, सत्य सनातन धर्म ही हो सकता है और संसार के मतों में यदि जरा-सा भी सृष्टिक्रम विरुद्ध और वेद के सिद्धान्तों के विरुद्ध मान्यताएं हैं वो सत्संग कदापि नहीं हो सकते हैं।

आर्यसमाज की स्थापना सृष्टि के आदि में ही हो गयी थी

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्यसमाज का पुनः उद्धार किया वा पुनरावृत्ति करी। सर्वप्रथम राजा मनु के सात पुत्र थे। एक शाखा में भगीरथ, अंशुमान, दलीप, रघु आदि हुए और दूसरी शाखा में सत्यवादी हरिश्चन्द्र आदि हुए। वैवस्वत मनु के पश्चात् सूर्यवंश की 39 शाखा बीत जाने के बाद अयोध्या में श्रीराम का जन्म होता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के समय में तीन संस्कृतियों का जन्म हो चुका था, एक आर्य संस्कृति, दूसरी वानर संस्कृति, तीसरी राक्षस संस्कृति। प्रारम्भ में एक ही वंश था। बाद कालन्तर में रहन-सहन, आचार-विचार के कारण परिवर्तन आ गया, आता गया विभिन्न संस्कृतियां फैल गयीं। खास बात यह थी कि तीनों की संस्कृति वैदिक संस्कृति थी तीनों में वेदों के अध्ययन की परम्परा थी। और तीनों के तीन प्रमुख केन्द्र थे। आर्य संस्कृति का केन्द्र अयोध्या, वानर संस्कृति का केन्द्र किष्किन्धा, राक्षस संस्कृति केन्द्र श्रीलंका था। वानरों की पूछ की कल्पना है। बन्दर नहीं अपितु बन में रहने वाला और राक्षस भी मनुष्यों की ही तरह थे। राक्षस लोग निश्चय ही स्वतन्त्र भोगवादी प्रवृत्ति के थे। वैसे राक्षस भी वैदिक संस्कृति व आश्रमों का पालन करते थे। वानर संस्कृति दोनों के बीच की थी। आर्यों की उपेक्षा के कारण उच्च आदर्शों पर पूर्णरूप से नहीं पहुँच पाये। आर्य संस्कृति और अनुशरणीय वानर संस्कृति यज्ञ प्रधान थी और राक्षस संस्कृति हिंसावादी थी। देखने में आया महाभारत काल तक आर्य संस्कृति शनैः-शनैः कम होती गयी और राक्षस संस्कृति बलवती होती गयी और आज राक्षस संस्कृति चरम सीमा पर है।

आज आर्यसमाज के सामने चहुंओर चुनौतियां ही चुनौतियां हैं

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी जब रणक्षेत्र में उतरे तब उन्हें चारों तरफ ललकार ही ललकार सुनाई दी, चारों ओर चैलेंज ही चैलेंज थे। देश की परतन्त्रता, धार्मिक व सामाजिक अन्धविश्वास, राजनैतिक शोषणवृत्ति आदि-आदि उन्होंने सब चुनौतियों को स्वीकार किया और एकेले ही डटकर मुकाबला किया।

आज आर्यसमाज के सामने चुनौतियों का अम्बार बदले परिपेक्ष में लगा हुआ है चारों ओर अनार्ष चलन का बोलवाला है। कहीं धार्मिक अन्धविश्वास, सामाजिक साम्यवाद की कमी, राजनैतिक भष्ट्र चरित्र, उच्च से उच्च अधिकारी या नेतृत्व जड़पूजा- एक ईश्वर की जगह मानवों को ईश्वर मान पूजा पद्धति, ऋषि दयानन्द जी के युग से आज विशाल रूप में दिनों-दिन अनाचार फैल रहा है। कोई किसी को सत्य मार्ग बताता है तो उसका विरोध हो कर जीवन खत्म किया जाता है। आज आर्ष-अनार्ष, धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, जड़,-चेतन, ईश्वर-पूजा आदि का अन्धविश्वास व सृष्टिक्रम व विज्ञान के प्रतिकूल चारों ओर आँख-मूंद चलन

हो रहा है। आज की विकट परिस्थितियों को प्रत्येक आर्य भलीभांति समझ व देख रहा है विवशता दिख रही है।

वर्तमान युग में चुनौतियों से कैसे निपटे-मेरे विचार में

आज आर्यसमाज को दिशा बदलनी होगी। खण्डन का मार्ग छोड़ केवल वेदों के सिद्धान्तों के अनुकूल व्यापक तौर पर मण्डन ही मण्डन का रूप जनता के सामने रखकर कथित अन्धविश्वासों का खण्डन स्वयं ही हो जाता है। आज जनता सत्य विचार सुनने को तरस रही है। आडम्बरों से तंग आ चुकी है। हमें सत्य की बड़ी लकीर खींचकर सामना करना पड़ेगा। समाचार-पत्रों में वेदों के सिद्धान्तों के लेख रखने होंगे। आर्यसमाज को केवल मण्डन पर वेदों के सिद्धान्तों की प्रेस कॉन्फ्रेंस करनी होगी। भारत के हर राज्य में जो लोकप्रिय अखबार है उनमें धन देकर सिद्धान्तों पर नित्यप्रति एक पेज छपवाना होगा। जब हम वेदों के व अन्य धर्म ग्रन्थों के सैद्धान्तिक स्वरूप को बिना किसी धर्म सम्प्रदाय के खण्डन व विरोधाभास के समाज के सामने रखेंगे तो कोई उस पर आपत्ति नहीं कर सकेगा। नियमानुसार अपने का स्वरूप रखने को सब स्वतन्त्र हैं।

आर्यसमाज का नेतृत्व एक हो

सम्पूर्ण आर्यजगत् की एक सार्वदेशिक सभा हो। एक प्रतिपिधि सभा प्रत्येक जिले में हो। एक सर्वोपरि संन्यासियों की धर्मसभा हो तथा सार्वदेशिक सभा का एक विभाग केवल अखबारों व प्रेस के प्रचार बनाया जाए जिसका व्यय प्रतिनिधि सभा उठा सकती है। प्रचार विभाग हो। प्रत्येक क्षेत्र की आर्यसमाजों को प्रत्येक मोहल्ले की सामुदायिक भवनों में सबको आमन्त्रित करके केवल यज्ञ का सार व वेदों का मंडन विचार रखे जायें।

आर्यसमाज को जातिवाद का सरनेम मिटाकर साम्यवाद का उदाहरण रखना होगा

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने जातिवाद का खण्डन करके वर्ण-व्यवस्था पर बल दिया है। आज हम सभी आर्य आने नाम के आगे उपजाति लगा रहे हैं। एक प्रकार से हम ऋषि आज्ञा का उल्लंघन कर रहे हैं। हम भी जातिवाद की खाई में गिरे हुए हैं। इससे हम आर्य अपनी संख्या भी नहीं समझ रहे हैं। यदि हम सभी आर्य अपने नाम से जाति उपनाम हटा दें और सभी आर्य सरनेम आर्य लगावें तो एक नई क्रान्ति का जन्म होगा और सम्पूर्ण मानव समाज में एक सैद्धान्तिक विचार जायेगा। पहल प्रस्ताविक रूप से सार्वदेशिक सभा और प्रतिनिधि सभाओं को करना होगा। केवल एक जातिवाद शब्द हटाने से ही आर्यसमाज सुर्खियों में आ जायेगा। सबका ध्यान आर्यसमाज के तरफ खिंचेगा और हमारी भावी पीढ़ी को भी मार्ग मिलेगा। हमारी समाज में अलग पहचान बन जायेगी। हम पहल के लिए सभी नेतृत्व के प्रतिनिधिओं को मीटिंग करके विचार करना अभिष्ट होगा। इस प्रकार से आर्यसमाज ऋषि आज्ञा व वेदों का पालन करते हुए मानव समाज में कथित जातिवाद को कम करने में प्रेरणादायक सहायक होगा।

आर्यसमाज को करवट लेनी होगी

मैं, यूट्यूब पर किसी विद्वान् के प्रवचन सुन रहा था। वह कह रहे थे कि अर्धशताब्दी तक आर्य सदस्यों की संख्या साठ प्रतिशत थी और आज घटते-घटते एक या दो प्रतिशत रह गयी है। यह वास्तव में चिन्ता का विषय है। हम आर्यों ने भवन तो बहुत खड़े कर दिये है किन्तु आर्य नहीं बना पा रहे हैं। कारण हम केवल यज्ञों में ही लिपट गये हैं, जबकि महर्षि ने यज्ञ को व्यक्तिगत प्रक्रिया बताया है। हमें समाचार-पत्रों व अन्य साधनों से जनता के समक्ष केवल बिना खण्डन किये हुए केवल वेदों का मण्डन पक्ष ही रखना होगा और प्रचार का तरीका बदलना होगा। हमें केवल जनता को वैदिक धर्म की मान्यता जैसे ईश्वर, धर्म, जातिवाद, पूजा-पद्धति, दुर्व्यसनों से छुटकारा आदि-आदि के मण्डन पक्ष को प्रमाण सहित रखना होगा।

मैं, करीब 65 साल से आर्यसमाज का प्रचार व रचनात्मक कार्य कर रहा हूँ। मैंने जमीन से जुड़ कर बहुत कार्य किया। अब 80 वर्ष का हो गया हूँ जो अनुभव में मेरे आया वह विचार व्यक्त किये हैं। आज हमें जागना ही होगा। करवट लेनी ही होगी।

संम्पर्क-गढ़ निवास मोहकमपुर, देहरादून (उत्तराखण्ड)
मो० 9411512019, 9557641800

छोटा विज्ञापन बड़ा लाभ

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक समाचार पत्र में विज्ञापन देकर लाभ उठायें।

सीधी व सच्ची सीख

❑ प्राचार्य अभय आर्य, रोहतक

ऋषियों की सीख सीधी व सच्ची है। ऋषि दयानन्द ने इसी सच्चे मार्ग का अवलम्बन किया। आज भी कई मूर्ख व्यक्ति व कुछ लोग धूर्त्तता में ऋषि द्वारा प्रतिपादित 'ब्रह्मचर्य', 'धाय-प्रकरण', 'नियोग' जैसे सिद्धान्तों पर आक्षेप लगाते हैं। इन लोगों को यह नहीं पता कि उस समय वे ऋषि पर नहीं अपितु 'वेद', 'उपनिषद्' 'सुश्रुत' पर आक्षेप लगा रहे हैं। ऋषि ने इन सिद्धान्तों के संदर्भ में इन्हीं शास्त्रों की सत्य व्याख्या की है। कुटिल लोग इस संदर्भ में अधूरे प्रसंग को प्रस्तुत करते हैं, यथा—24 वर्ष के ब्रह्मचर्य का उल्लेख न कर सीधा 48 वर्ष के ब्रह्मचर्य का उल्लेख, नियोग प्रसंग में नियोग की 'शर्तों' का उल्लेख न करना, धाय-प्रकरण में ऋषि जी कहते हैं कि जहाँ व्यवस्था न हो वहाँ जैसा उचित समझें वैसा करें, लेकिन धूर्त्त लोग ऋषि के इस कथन का उल्लेख नहीं करते।

ऋषियों का मार्ग सीधा है। ऋषि दयानन्द की स्पष्ट घोषणा है—''ईश्वर जैसा न कोई था, न है और न ही होगा।'' ईश्वर का मुख्य नाम 'ओ३म्' है। 'वेद', 'उपनिषद्' आदि सत्य शास्त्रों के आधार पर ईश्वर के स्वरूप को जान 'योगदर्शन' में वर्णित 'यम-नियम' आदि का पालन करते हुए उसकी उपासना करनी चाहिए। 'पञ्चमहायज्ञ' प्रत्येक गृहस्थ को करने चाहिएं।

लेकिन हाय! ढोंगी गुरुओं ने कैसी कुटिल चाल चली है? स्वयं को परमात्मा बता रहे हैं। इस प्रकार ये लोग तो प्रथम द्रष्टा ही धूर्त्त हैं। जिसने भी स्वयं को परमात्मा माना उसे तो पौराणिक कथाओं में भी राक्षस माना गया है। इन लोगों से अधिक अज्ञान-अन्धकार को बढ़ाने वाला और भला कौन हो सकता है?

पुस्तकों के आवरण पर ये लोग 'सभी धर्म समान', 'मानव-धर्म' का ढोंग करते हैं, लेकिन अन्दर अपने मत को ही सबसे ऊपर बताते हैं। अत: इनसे 'धूर्त्त' कौन होगा? और मत-पन्थों की उपासना को अधूरी बताते हैं, स्वयं की विधि को पूरी। विधि भी इनकी क्या है—भूत-प्रेत, ऊल-जुलूल मन्त्र। अपने कुकर्मों के कारण जब जेल जाते हैं तो अपने बचाव में श्रीराम के वनवास व श्रीकृष्ण की कारावास का हवाला देते हैं? इन्हें ऐसा करते तनिक लज्जा भी नहीं आती। महापुरुष सदा 'धर्म' निभाने के लिए संघर्ष करते हैं, जबकि शैतान 'अधर्म' करते हुए 'नरक' को सहन करने का भी दु:साहस रखता है, जैसे दुर्योधन आदि ने किया था। अत: पाखण्डी गुरु शैतान होता है।

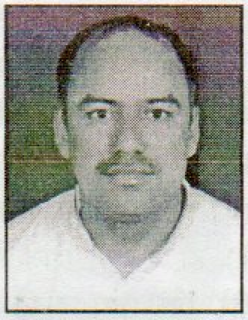

हिन्दुओं का रक्षक आर्यसमाज-'वेद', संस्कृत-संस्कृति, देश के सच्चे इतिहास, गाय, चोटी, जनेऊ, यज्ञ की रक्षा आदि में अग्रणी होने के कारण 'आर्यसमाज' ही हिन्दुओं का सबसे बड़ा रक्षक संगठन है। यही संगठन बताता है कि हम सब 'आर्य' हैं। इसी पहचान से एकता हो सकती है, सद्गुण आ सकते हैं। वेद का भी तो आदेश है-'सारे विश्व को आर्य बना दो।' वेद को मानने वाले हिन्दू भाई क्यों इस सन्देश को स्वयं पर लागू नहीं करते? श्रीराम के प्रति आस्था व्यक्त करने वाले क्यों स्वयं को 'आर्य' कहने से बचते हैं? 'पाखण्ड', 'जातिवाद' जैसी बुराइयों को हिन्दुओं से दूर करने का प्रयास कर, ईसाइयत और इस्लाम के प्रभाव को रोक कर सबको 'वेद' का सच्चा मार्ग दिखाने वाले संगठन 'आर्यसमाज' को यदि कोई हिन्दू अपना शत्रु समझता है, तो यह उसकी बड़ी भारी भूल है। यह स्वयं के पांव पर कुल्हाड़ी मारने जैसा है। अनेक पौराणिक विद्वानों, नेताओं ने 'आर्यसमाज' से मतभेद होते हुए भी 'आर्यसमाज' के कार्यों की प्रशंसा की। लेकिन शायद आज पौराणिक उस स्तर से भी गिरते जा रहे हैं। आर्यसमाज में भी मिशनरी कार्यकर्त्ताओं की भारी कमी है। दोनों ओर की ये कमियाँ सत्य-धर्म के लिए खतरा बन चुकी हैं।

वार्षिक उत्सव सूचना

आर्यसमाज रूपनगर न्यास (पंजी०) रूपनगर रोहतक का वार्षिक उत्सव दिनांक 14 सितम्बर से 18 सितम्बर 2022 तक मनाया जा रहा है। इस कार्यक्रम में मुख्य वक्ता स्वामी सच्चिदानन्द जी एवं भजनोपदेशक पंडित सुमित्रदेव जी आर्य सहारनपुर होंगे। समय-प्रात: 7.30 से 11.00 बजे तक यज्ञ, भजन प्रवचन, सायंकाल 3.00 से 5.00 बजे तक एवं रात्रि 7.30 से 10.00 बजे तक भजन व उपदेश। आप सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

ओहो ! वह समर्पण भाव (३)

❑ राजेश आर्य, गांव आट्टा, जिला पानीपत मो० 9991291318

प्रिय पाठकवृन्द! यजुर्वेद का मंत्र (19-77) कहता है कि प्रजापति परमात्मा ने झूठ में अश्रद्धा और सत्य में श्रद्धा को रखा (अश्रद्धामनृतेऽदधाच्छ्रद्धो सत्ये प्रजापतिः)। ऋषि दयानन्द ने मूलशंकर के रूप में (चौदह वर्ष की अवस्था में) ही नकली शिव में अश्रद्धा व्यक्त कर दी थी और धीरे-धीरे सत्य जानते गये और असत्य में अश्रद्धा करते गये। उनका पूरा जीवन इसी मन्त्र की व्याख्या है। असत्य में अश्रद्धा रखने के कारण लोगों ने उन्हें नास्तिक व अंग्रेजों का एजेंट तक कह डाला, पर उन्होंने अनित्य संसार को रिझाने के लिए नित्य सत्य का त्याग नहीं किया। ब्रह्मसमाजियों की सेवा, थियोसोफिकल सोसाइटी का सम्मान, काशी वालों का विष्णु अवतार घोषित करने का लालच, राणा सज्जनसिंह (एकलिंग गद्दी) का लोभ, पौराणिकों की गालियाँ, मुसलमानों व ईसाइयों (अंग्रेजों) की धमकी आदि कोई भी उन्हें असत्य पर श्रद्धा के लिए मजबूर नहीं कर सका। आर्यसमाज के नियमों में भी उन्होंने सत्य को मुख्य स्थान दिया है और अपने अनुयायियों को कहा-सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा तत्पर रहना चाहिए।

उनके श्रद्धालु शिष्यों ने भी अपने आचार्य की परम्परा को आगे बढ़ाया। प्रस्तुत लेख में उन्हीं में से कुछ के प्रेरक प्रसंग देखते हैं—जब पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल आर्यसमाज के सम्पर्क में आये, तो उन्होंने धूम्रपान आदि दुर्व्यसन त्याग कर सदाचार (ब्रह्मचर्य) के नियमों का दृढ़ता से पालन करना शुरू कर दिया। इनके पिता जी आर्यसमाज से चिढ़ते थे। एक दिन वे बिस्मिल जी से बोले—आर्यसमाजी (शास्त्रार्थ में) हार गए, अब तुम आर्यसमाज से अपना नाम कटवा दो। तब ऋषि दयानन्द के मस्ताने शिष्य ने कहा—आर्यसमाज के सिद्धान्त सार्वभौम हैं, उन्हें कौन हरा सकता है?

अनेक वाद-विवाद के पश्चात् पिताजी जिद्द पकड़ गये कि आर्यसमाज से त्यागपत्र न देगा तो मैं तुझे रात को सोते समय मार दूँगा या तो आर्यसमाज से त्यागपत्र दे दे या घर छोड़ दे। ओहो! ऋषि का प्यारा भक्त केवल एक लंगोट में ही था, जब पिताजी के पैर छूकर गृहत्याग कर चला।

स्वामी श्रद्धानन्द की तरह दुर्व्यसनों को त्यागकर आर्यसमाज के दलितोद्धार, गुरुकुल प्रणाली व शुद्धि आन्दोलन को समर्पित होकर बलिदान देने वाले भक्त फूलसिंह का देवत्व भी गजब का था। पटवारी रहते समय ली गई रिश्वत को वापस देने के लिए अपनी जमीन तक बेच दी और लगभग साढ़े चार हजार रुपये, रिश्वत देने वालों की सेवा में उपस्थित होकर ग्रामपञ्चों के सम्मुख वापस दिये।

भक्त जी ने पटवारी रहते हुए एक चमार को बेगार में न जाने के कारण पीटा था। धार्मिक भावना जगने के दस-पन्द्रह वर्ष बाद वह बूढ़ा चमार उन्हें मिल गया, तो अपना जूता उसके हाथ में देकर बोले—''मेरे बूढ़े बाप! मैंने बड़ा पाप किया था। एक बार नशे में आपको पीटा था। यह जूता लो और मेरे सिर में मारो।'' वह बूढ़ा हाथ जोड़कर रोने लगा और उनसे लिपटकर बोला—''फूलसिंह पटवारी, तू तो देवता बन गया।'' भक्त जी ने उसे कुछ रुपये दिये, तभी उन्हें शान्ति मिली।

1930 ई० में भक्त जी को रोहतक में किसी सम्मेलन का स्वागताध्यक्ष बनाया गया। उस उत्सव के प्रधान महामना मालवीय जी थे। हाथी पर उनका जुलूस निकाला गया। हाथी पर बैठने के लिए समस्त रोहतक निवासी सज्जनों ने भक्त जी से प्रार्थना की, परन्तु भक्त जी ने कहा—''मैं प्रायश्चित्ती हूँ, मुझे हाथी पर बैठने का हक नहीं है। ....यदि मुझ पर अधिक दबाव डालोगे तो मैं यहाँ से चला जाऊँगा।''

मोठ गाँव (हिसार) में हरिजनों का कुआं बनवाने के लिए भक्त फूलसिंह ने 23 दिन तक अनशन किया था (सितम्बर 1940)। कुआं बना, तो इस चर्चित अनशन से गाँधी जी भी बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने भक्त जी को दिल्ली बुलाकर डेढ़ घण्टे तक वार्तालाप किया। (आर्यसमाज के) 'बलिदान' में लिखा है—''महात्मा जी के कहने का मुख्य सार यही था—आप आर्यसमाज के दायरे से निकलकर मेरे प्रोग्राम के अनुसार कार्य कीजिये। समय-समय पर मैं भी आपको यथाशक्ति सहायता देता रहूँगा। इससे आप देश की अधिक सेवा कर सकेंगे।''

भक्त जी ने छल-कपट रहित सरल और सीधी-सादी भाषा में उत्तर दिया—''महात्मा जी, मैं आपकी सब आज्ञाओं

को मानने के लिए तैयार हूँ, परन्तु आर्यसमाज को नहीं छोड़ सकता। क्योंकि ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज तो मेरे रोम-रोम में रम चुके हैं, वे इस जन्म में निकाले से भी नहीं निकल सकते।''

महानता का आदर्श रखा स्वामी श्रद्धानन्द ने—बलिदान (23 दिसम्बर 1926) से कुछ पहले अपने पुत्र इन्द्र विद्यावाचस्पति को आर्यसमाज का इतिहास लिखने के लिए कहा और यह भी कहा था—''देखो! इतिहास लिखते समय हमारी भूलों को तिरोहित न करना। हमसे भी बड़ी-बड़ी भूलें हुई हैं।''

संन्यास की वास्तविक अवस्था कैसी होती है, इस विषय में प्रा० श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' जी ने एक संस्मरण लिखा है—दयानन्दमठ दीनानगर में महात्मा आनन्दमुनि जी से उन्होंने कहा—''मेरे पास आपका वह ऐतिहासिक चित्र है, जो शोलापुर में सत्याग्रह के दिनों स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के साथ खींचा गया था।'' तो वे झट बोले—''वह शेषराव मर गया। यह आनन्दमुनि है।''

आचार्य भगवान्देव जी (स्वामी ओमानन्द) स्वामी आत्मानन्द जी की लिखी पुस्तक 'मनोविज्ञान तथा शिवसंकल्प' छपवा रहे थे। प्रबन्धक श्री राजेन्द्र नारायण ने पुस्तक में छापने के लिएस्वामी जी का चित्र मांगा, तो सब ऐषणाओं को सांप की केंचुली की तरह उतार फैंकने वाले संन्यासी ने पत्र में लिखा—''चित्र देने को मन नहीं चाहता। मैं इसमें लोकैषणा की घातक झलक देखता हूँ। कृपया नाममात्र ही पर्याप्त समझें।'' चित्र के लिए दोबारा आग्रह करने पर 24 अक्तूबर 1950 को पुनः लिखा—''मैं तो अनेक दोषों से सम्पन्न एक साधारण जीव हूँ। कपिल, कणाद आदि पूज्य महर्षियों का चित्र आज तक किसी ने उनके पुस्तकों में नहीं छापा और उनके जीवन अपने सुगन्ध से आज तक जनता के जीवनों को सुगन्धित कर रहे हैं। अतः यदि जीवन में कुछ भी गुण हुआ, तो बिना ही चित्र के किसी को कुछ लाभ पहुँच ही जाएगा, कृपया पुस्तक में चित्र न दीजिए।''

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने भी अपने स्मारक के विषय में पूछे जाने पर कहा था—''यदि मैंने कोई स्मरण रखने योग्य कार्य किया है तो वही कार्य मेरा स्मारक होगा। यदि न किया होगा तो मेरा कोई भी स्मारक मेरी स्मृति को सुरक्षित न रख सकेगा।'' (स्वतन्त्रानन्द संस्मरणांक, आर्य मर्यादा, मार्च 1973)

जब हैदराबाद का निजाम हिन्दुओं पर अत्याचार कर रहा था, तो गांधी जी ने उसे कभी नहीं रोका, पर जब आर्यसमाज ने उसके विरुद्ध सत्याग्रह किया तो वे बोले—''आर्यसमाज का यह सत्याग्रह बेवक्त की शहनाई है। इससे हिन्दू-मुस्लिम एकता में फूट पड़ेगी।'' गांधी जी ने स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को सत्याग्रह बन्द करने का संदेश भेजा। स्वामी जी ने इसका उत्तर यह दिया कि ''इतनी शक्ति लगाकर भी हम अपना मनोरथ सिद्ध न कर पाए तो हम अन्य उपायों से स्वसिद्धि प्राप्त करेंगे, किन्तु कार्य अधूरा न छोड़ेंगे।''

1941 ई० में कार्तिक पूर्णिमा को गढ़ मुक्तेश्वर के प्रसिद्ध मेले में हरियाणा-उत्तर-प्रदेश के किसान श्रमिक संगठन ने एक विशाल सम्मेलन का आयोजन किया। संगठन के मुखिया चौधरी हरिराम एडवोकेट आदि ने सम्मेलन का अध्यक्ष हैदराबाद सत्याग्रह के विजयी योद्धा स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी को बना दिया। मेले में अध्यक्ष की शोभायात्रा निकालने के लिए सजा सजाया हाथी मंगवाया गया। श्री स्वामी जी को उस पर चढ़ाया गया। सम्मेलन के अधिकारी श्रमिक संगठन का झण्डा (जिस पर हल और तलवार का चिह्न था) स्वामी जी को पकड़ाने लगे, तो उन्होंने झण्डा लेने से मना करते हुए कहा कि ''मैं तो केवल एकमात्र ओ३म् के झण्डे का अनुयायी हूँ। जो सार्वभौम सत्य का प्रतीक है। जिस पर न साम्प्रदायिकता का काईरंग चढ़ता है, न जाति-पाति की तंग दीवारें ही कोई बाधा डालती हैं। जहाँ में आर्य हूँ वहाँ संन्यासी के नाते विशेष रूप से सार्वभौम सत्य का पुजारी हूँ।''

यह सुनकर सम्मेलन के अधिकारी हैरान हो गये। विचार-विमर्श के बाद ओ३म् का झण्डा मंगवाया गया और पुनः स्वामी जी से निवेदन किया कि आप ओ३म् के झण्डे के साथ छोटा झण्डा किसान श्रमिक दल का भी ले लें। स्वामी जी ने यह सुझाव भी ठुकराते हुए कहा कि ''हाथी के पांव में सबके पांव आ जाते हैं। ओ३म् की उपस्थिति में हल और तलवार की धार के साथ प्रेम की धारा भी बहती है। मेरे अन्तरात्मा या अन्तःकरण में ओ३म् पताका के सिवाय दूसरे प्रतीक समाते ही नहीं।''

यह सुनकर अधिकारी गुस्से से भर गए और बोले—''स्वामी जी, जुलूस आपका साथ न देगा।'' स्वामी जी

सादे भाव से बोले—"आप लोग साथ चलें या न चलें, ओ३म् का झण्डा मेरे साथ अवश्य रहेगा।" हाथी सहित स्वामी जी को अकेला छोड़ जुलूस का रुख मोड़ दिया गया। कुछ आर्यसमाजी जय बोलते हुए स्वामी जी के साथ चले। इधर एक बड़े महात्मा का अपमान होते हुए देखकर साधु सम्प्रदाय में खलबली मच गई। कोई कहता जमीन हिल जाएगी, आसमान फट जाएगा, गंगा उफन पड़ेगी, ऐसे महात्मा का अपमान भगवान् सहन न करेंगे। चारों ओर से साधुओं की भीड़ जमा होने लगी। कोई रणसिंगा बजा रहा था तो कोई लम्बी तुरही फूँक रहा था। कई घण्टे घड़ियाल ही उठा लाए।

साथ ही शंखों की तू-तू पी-पी ने भीड़ जमा कर दी। सम्मेलन वालों के जुलूस से जनता खिसकने लगी। कुछ दूर चलकर धीरे से किसानों का जुलूस समाप्त हो गया, समग्र जनता स्वामी जी के साथ जयघोष करती हुई चलने लगी। सम्मेलन वालों ने हार मानकर स्वामी जी को पुनः अपना लिया। (वही, पंडित समरसिंह वेदालंकार)

एक बार दीनानगर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कुछ कार्यकर्त्ता स्वामी जी की कुटिया पर आये और उनसे अपने गुरुदक्षिणा उत्सव की अध्यक्षता करने की प्रार्थना की। इस उत्सव के अवसर पर संघी भाई ध्वज की पूजा करते हैं और ध्वज को पैसे की भेंट चढ़ाते हैं। स्वामी जी ने यह प्रार्थना अस्वीकार कर दी।

कारण पूछने पर बोले कि मैं इसमें आर्यसमाज की हानि समझता हूँ। उन्होंने पूछा कि इससे आर्यसमाज की क्या हानि है। स्वामी जी ने कहा—"यह मैं समझता हूँ कि क्या हानि होगी। मेरे सिद्धान्त विरुद्ध काम करने का समाज पर अच्छा प्रभाव न पड़ेगा।"

उपरोक्त प्रसंग के समान ही स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के शिष्य स्वामी सोमानन्द जी ने एक और घटना लिखी है—भारत विभाजन के बाद रोहतक की घटना है। नगर के दुर्गा मन्दिर में एक स्थान पर चारों ओर और ऊपर भी शीशे लगा उसमें एक योगी ने समाधि लगाई। नगर के सहस्रों नर-नारी दर्शन करने जाने लगे। मेरा भी विचार जाने का था। उसी समय दयानन्दमठ में पूज्यवर स्वामी जी महाराज पधारे। एक आर्य सज्जन ने कहा—"महाराज, आप भी समाधि देखने चलिये।" पूज्यवर श्री आचार्य जी ने कहा—"मेरा जाना ठीक नहीं, पाखण्ड को प्रोत्साहन मिलेगा। लोग प्रमाण देंगे कि आर्यसमाज के संन्यासी भी दर्शन करने जाते हैं। इस प्रकार अन्ध परम्परा चलने लगती है।" दूसरे दिन ही योगी की पोल खुल गई जब दम घुटने पर उसने संकेत करके चौकटे के एक कोने में सुराख करवाया।

एक बार आर्यसमाज चौक प्रयाग के सभासदों में मतभेद होकर दो दल बन गये। उसे मिटाने के लिए दोनों दलों के सदस्य पण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय जी के पास गये और उनसे प्रधान बनने के लिए प्रार्थना करने लगे, तो पण्डित जी ने कहा—"मैं तो वर्षों से पदमुक्त रहकर ही सेवा का निश्चय कर चुका हूँ।" यह कहकर कहीं बाहर चले गये। वापस लौटने पर पता चला कि उनके बेटे श्री शिवप्रकाश को ही प्रधान बना दिया है, तो दार्शनिक विद्वान् ने सभासदों से पूछा—"प्रधान बड़ा अथवा प्रधान का पिता।" अर्थात् तुम तो मुझे आर्यसमाज का प्रधान बना रहे थे, अब तो मैं प्रधान का पिता बन गया हूँ।

पण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय जी वैदिक धर्म प्रचार के लिए केरल गये। चैंगन्नूर नगर में उनके जुलूस के लिए लोग हाथी लाये। पूज्य उपाध्याय जी ने हाथी पर बैठने से यह कहकर मना कर दिया कि यहाँ तो लोग निर्धनता के कारण ईसाई बन रहे हैं और आप मुझे हाथी पर बिठाकर यह दिखाना चाहते हैं कि मैं बड़ा धनी मानी व्यक्ति हूँ या मेरा समाज बड़ा साधन-सम्पन्न है। लोकैषणा से दूर उपाध्याय जी पैदल चलकर ही नगर में प्रविष्ट हुए।

हम तो बिक जाते हैं, उन अहले-करम के हाथों।
करके एहसान भी जो नीची नजर रखते हैं॥

क्रमशः अगले अंक में....

75 वर्ष की स्वतंत्र सत्ता के बाद भी लगातार बढ़ती जा रही राष्ट्रभाषा की अवमानना के विरुद्ध 23 सितम्बर 2022 को सुभाष चौक पर विशाल प्रदर्शन

वैदिक विश्व सभा हरयाणा एवं रोहतक नगर की आर्यसमाजों द्वारा यह प्रदर्शन किया जाएगा। पहले 9-30 पर प्रातः मानसरोवर पार्क में दक्षिण-पश्चिमी कोणे में इकट्ठे होंगे। 10 बजे सुभाष चौक पर प्रदर्शन होगा। प्रत्येक भारतपुत्र-भारतपुत्री का कर्तव्य है वह प्रदर्शन में भाग ले।

निवेदक—महावीर शास्त्री, भारतपुत्र परिषद् वैदिक विश्व सभा हरयाणा, रोहतक मो० 9466565162

यज्ञ हेतु दान देकर पुण्य के भागी बनें

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा में प्रतिदिन दोनों समय यज्ञ किया जाता है और पर्यावरण शुद्धि के लिए रोहतक जिले के सरकारी, गैर सरकारी विद्यालयों और गांव-गांव में यज्ञ व वेद प्रचार का आयोजन किया जाता है। इस महायज्ञ में आप लोग अपने बच्चों के जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ व अन्य उपलक्ष्यों पर दान देकर पुण्य के भागी बनें। संस्था सदैव आपकी आभारी रहेगी।

यज्ञदान हेतु बैंक खाता

ACCOUNT NAME - ARYA PRATINIDHI SABHA HARYANA
BANK NAME - PNB JHAJJAR ROAD ROHTAK
Account No. - 0406000100426205
IFSC - PUNB0040600
MICR - 124024002

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

श्री ..

पता ....

....

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा